गढ़वाल हिमालय :ष्सांस्कृतिक विविधता

जयवर्द्धन सेमवाल 'विजय'
हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, स्वामी रामतीर्थ परिसर, टिहरी गढ़वाल

गढ़वाल और कुमाऊॅ हिमालय की सांस्कृतिक एवं जैविक विविधता ने इस क्षेत्र को विश्व के समक्ष अपनी अलग पहचान बनाने में अहम भूमिका निभायी है। एक और महाकवि कालीदास अपने ग्रन्थ कुमार सम्भव में इसे अश्विनी क्षेत्र कहते है तो दूसरी ओर अनेक ग्रंन्थों में इसे देवताओं का निवास स्थान माना गया है। इस क्षेत्र की सांस्कृतिक विविधता यहॉ के निवासियों की धारणाओं व उनके परम्परागत विश्वासों के बारे में बरबस ही ध्यान आकृष्ट कर चिन्तन करने को विवश कर देती हैं। एक ओर जहॉ इस क्षेत्र के किसी भाग में दुर्योधन को पूजा जाता है वहीं दूसरी ओर कहीं हनुमान जी स्थानीय निवासियों द्वारा पूज्य नहीं हैं। क्या है इस सांस्कृतिक विविधता का महत्व . एक आलेख:

सम्पूर्ण भारत वर्ष में हिन्दू धर्म के अनुयायी हनुमान जी की पूजा करने के साथ साथ उन्हें अनेक हिन्दू धर्म ग्रन्थों के अनुसार अश्वश्थामा, बलि, व्यास, कृपाचार्य तथा विभीषण के साथ अमर मानतें **हैं**, लेकिन उत्तराखण्ड क्षेत्र के चमोली जनपद में एक सूदूरवर्ती भोटिया जनजातीय गॉव है ***द्रोणागिरी।*** इस गॉव में हनुमान जी का नाम तक लेना गलत माना जाता है। स्थानीय प्रचलित मान्यता के अनुसार, सुषैन वैद्य के निर्देश से लक्ष्मण के प्राण रक्षा हेतु हनुमान जी संजीवनी बूटी के लिए इस क्षेत्र से पर्वत का एक भाग उखाड़कर ले गये थे। इस गॉव के लोग हनुमान जी के इस कृत्य से बहुत दु:खी हैं। उनका मानना है इसी कृत्य के कारण प्राणदायिनी औषधि संजीवनी इस क्षेत्र से विलुप्त हो गयी। यहॉ हनुमान जी के स्थान पर पर्वत देवता का मंदिर है और पर्वत पूजा की जाती है। स्थानीय निवासियों की आस्था के अनुसार पर्वत देवता अभी भी अत्यधिक कष्ट में हैं और उनके दाहिने भाग से, जिसे हनुमान जी उखाड़ कर ले गये थे, निरन्तर खून की धारा बह रही है।

पर्वत देवता के क्षेत्र से बेमौसम जड़ी बूटियॉ लेना भी पाप माना जाता है। ऐसा करने में वर्षा हो जाती है। गॉव के लोग वर्षा के लिए बेमौसम जड़ी बूटी लेने वाले को कोसते हैं, और वह व्यक्ति ग्रामीणों के कोपभाजन का शिकार बनता है। गॉव वालों की पर्वत के प्रति अटूट श्रद्धा देखते ही बनती है। यह भी एक संयोग है वास्तव में जब भी कोई व्यक्ति (पर्यटक,शोधार्थी, वैज्ञानिक) बेमौसम जड़ी बूटी निकालता है उस दिन अतिवृष्टि हो ही जाती है। वहॉ पर सब कुछ प्रकृति पर ही निर्भर है। यह बात तो दीगर है कि उत्तराखण्ड के हर क्षेत्र की सांस्कृतिक विविधता के पीछे मानव जाति का ही कल्याण निहित है। यहॉ पर भी पर्वत पूजा के पीछे जनहित ही दिखायी देता है। वह क्षेत्र (द्रोणागिरी) जड़ी बूटियों का अनमोल खजाना है। हो सकता है, पर्वत से जड़ी बूटियों को संरक्षित करने की यह उनकी अपनी एक विशेष प्रकार की परम्परागत संरक्षण की पद्यति हो। उस क्षेत्र के निवासियों के अनुभवी और दूर दृष्टि वाले पूर्वजों को यह आभास जरूर रहा होगा कि भविष्य में मानव अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए प्रकृति के साथ क्रूर व्यवहार भी कर सकता है। इसलिए हम कैसे इस क्षेत्र की सम्पदा को जिसे हम अपने पसीने से सींचते आ रहे है, बचायेंगे, फिर उन्होंने शुरू की होगी पर्वत पूजा। फिर भी !

इस क्षेत्र के निवासी पूर्ण रूप से आत्म निर्भर हैं और कृषि के अतिरिक्त भेड़ पालन भी उनका व्यवसाय है। भेड़ की ऊन से ये कालीन तथा विभिन्न प्रकार की वस्तुएं जैसे चोगठा (ओढ़न) पंखियां तथा लवा (परम्परागत महिला परिधान) आदि बनाते हैं। इनको अपने हाथ से बनाये सामान की बिक्री के लिए बहुत दूर पैदल चलकर सड़क मार्ग पर आना पड़ता है। वहा¡ से सड़क मार्ग द्वारा ये लोग जोशीमठ पहुॅचते हैं। यहॉ परिवहन आम लोगों के लिए व्यवस्थित नहीं है। और इन लोगों को अपने सामान की बिक्री के लिए आसानी से

बाजार उपलब्ध नहीं हो पाता है। ये लोग विभिन्न प्रकार की जड़ी बूटियों का उत्पादन भी करते हैं। वह भी इनकी एक नकदी फसल है। इस वैज्ञानिक युग में भी इस क्षेत्र के अस्सी फीसदी लोग विभिन्न बीमारियों के उपचार हेतु परम्परागत चिकित्सा पद्धति पर ही निर्भर हैं (मैखुरी इत्यादि, १९९८, नौटियाल इत्यादि, १९९८)।

अत: आज जहा¡ सभी देशों के बीच पेटेन्ट (एकस्व) की होड़ चल रही है उसके चलते हमें भी अपने क्षेत्र की अमूल्य धरोहर (जैविक एवं सांस्कृतिक विविधता) को लिपिबद्ध कर अतिशीध्र भविष्य की पीढ़ियों के लिए संजोकर रखना ही होगा।

सन्दर्भ:

नौटियाल, एस०, मैखुरी, आर० के०, एवं राव, के० एस० (१९९८)। परम्परागत चिकित्सा पद्धति में जड़ी बूटियों का योगदान: एक विशिष्ट अध्ययन। *हिमा.पर्यावरण,* १०(२): २०.२१।

मैखुरी, आर० के०, नौटियाल, एस०, राव, के० एस० एवं सक्सेना, के० जी० (१९९८)। रोल ऑव् मेडिसिनल् प्लान्ट्स इन टे.डि.शन.अल् हेल्थ् केयर सिस्टम् रू ऍ केस् स्टडि फ्रॉम नन्दा देवी बायोस्फियर रिजर्व । *कर्.रेन्ट् साइ.अन्स्,* ७५(२) : १५२—१५८।